बच्चों के हित के लिए पुस्तक संस्कृति विकसित करनी होगी

राजकुमार जैन राजन

यदि हम चाहते हैं कि देश का भविष्य उज्ज्वल हो तो हमें बालकों के व्यक्तित्व विकास की ओर ध्यान देना होगा क्योंकि आज के बच्चे ही कल देश के कर्णधार होंगे। बच्चों का जिज्ञासु मन कल्पना की उड़ान भरता है। उसके शांत मन में उथल - पुथल भी जारी रहती है।मन में उठते स्वभाविक सवालों अथवा जिज्ञासाओं को अभिभावक या अध्यापक अक्सर टाल जातें हैं। परिणामतः बच्चे के व्यक्तित्व के स्वतंत्र विकास का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है।

परिवार बालक की प्रथम पाठशाला होती है और माता - पिता उस बालक के प्रथम शिक्षक बच्चे के व्यक्तित्व निर्माण का बीजारोपण परिवार से ही होता है। शिक्षित और संस्कारवान अभिभावक व शिक्षक बालकों में काफी हद तक संस्कार सृजन का प्रयास करते हैं। उनकी जिज्ञासाओं को शांत करते हैं। उन्हें संयमित और धैर्यवान बनने की प्रेरणा देते हैं।यह अभिभावक, शिक्षक तथा उनकी परिस्थितियों पर निर्भर करता है कि वे बच्चे को किस सीमा तक विकसित कर पाते हैं।

आज गांव से लेकर शहरों तक मोबाइल, टी. वी., कम्प्यूटर, इंटरनेट ने बच्चों और बड़ों को अपने जाल में ऐसा जकड़ लिया है कि वे इसी में अपनी खुशियां ढूंढने में लगे हैं। इस कारण बच्चे तो जब देखो तब मोबाइल, टी. वी. या कम्प्यूटर स्क्रीन से चिपके ही नज़र आते हैं। नतीजतन उन्हें प्रतिदिन कई क्रूरता और हिंसा भरे दृश्य देखने को मिल रहे हैं। निरन्तर इस तरह के दृश्यों को देखते हुए बच्चे संवेदनशून्य हो रहे हैं। वे हिंसक, आक्रामक, एकाकी और चिड़चिड़े हो रहे हैं। बच्चों ने बाहर मैदानों में खेलना छोड़ दिया है। रिश्तों का सम्मान करना उनके मन से समाप्त होता जा रहा है।

बच्चों के दिलों में उतरती हिंसा, बढ़ते अवसाद और खोते जा रहे मानवीय मूल्यों को नियंत्रित करने वाले नैतिक और मानवीय दायित्वों का न कोई अर्थ रह गया है न कोई संदर्भ। पैसा कमाकर सारी सुख-सुविधाएं जुटा लेने की एक अंधी दौड़ जारी है। अभिभावकों के पास बच्चों के लिए समय नहीं है। बच्चे घर में रहते हुए भी अकेले हैं।स्नेह और मार्गदर्शन के अभाव में उनमें नकारात्मक भाव खूब विकसित हो रहे हैं। ऐसे माहौल में हम कैसे उम्मीद कर सकते हैं कि बच्चों का विचार तंत्र समुचित तरीके से विकसित हो। उनमें सोचने, समझने, अच्छे संस्कार पाने के लिए सद्साहित्य को पढ़ने के लिए ललक पैदा हो।

आज चैनलों पर, पत्र- पत्रिकाओं में, बालसाहित्य की गोष्ठियों और बाल कल्याण के आयोजनों में यह बहस अक्सर होती है कि नये समय और नये तकनीकी- विस्फोट ने बच्चों के लिए विचलित होने की परिस्थितियां पैदा की हैं। अब समय का चक्र पीछे तो नहीं

मोड़ा जा सकता है। कम्प्यूटर, मोबाइल, इंटरनेट, टी. वी., सिनेमा आदि के जरिये जो तरह- तरह की दुनिया खुलती है, उसमें सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह के भाव हैं। यहीं पर अभिभावक और शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। इन बच्चों को स्नेह, साथ चाहिए ... आपका सम्बल चाहिए। बच्चों के लिए आवश्यक संसाधन जुटा देना ही पर्याप्त नहीं है। उन्हें भावनात्मक व आत्मीय साथ भी चाहिए। बच्चों को समझाना होगा कि आभासी दुनिया और वास्तविक दुनिया में क्या फर्क है ? उनमें मित्रता, सहभागिता, सहयोग, अनुशासन, आत्मविश्वास आदि के जरूरी बिज बोन होंगे और इस कार्य में 'बालसाहित्य' ही अहम भूमिका निभा सकता है, निभा रहा हैं। बालसाहित्य बच्चों की कल्पनाशीलता तथा मानसिक क्षितिज को विकसित करने में सहायक होता है। बच्चों में बेहतर संस्कार एवम चरित्र निर्माण के साथ ही नई पीढ़ी के निर्माण में बालसाहित्य की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

'बालसाहित्य' से आशय बच्चों के लिए लिखा जाने वाला, बाल मनोविज्ञान की समझ के साथ बालमन की अभिव्यक्ति करने वाला साहित्य है। बालसाहित्य वही कहा जायेगा जिसमें बालकों के कोमल मन के साथ-साथ उनके परिवेश की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई हो, जिसे बालक सहज रूप से पसंद करे। आज प्रचुर मात्रा में बालसाहित्य प्रकाशित हो रहा है। बावजूद इसके बच्चों तक 'उत्कृष्ट बालसाहित्य' नहीं पहुंच पा रहा है। इसके लिए सीधा-सीधा दोष पालकों, शिक्षकों व रचनाकारों का भी है।

अधिकांश अभिभावक अपने बच्चों को महंगे इलैक्ट्रोनिक खिलौने, गेम्स, कपड़े, टू मिनिट नूडल, लेज तो खरीद कर दे देते हैं लेकिन स्वस्थ मनोरंजन के लिए अच्छी बाल पत्रिकाएं अथवा पुस्तकें खरीद कर नहीं देते। बच्चों को जब किताबें उपहार में दी जाती हैं तो उन्हें एक अजीब किस्म के फीके से उत्साह से ही स्वीकार किया जाता है। जब प्रौढ़ आयु के अभिभावकों, शिक्षकों में ही पुस्तकों के पठन - पाठन की रुचि का अभाव है तो बालकों में पुस्तकों के पठन, पाठन के प्रति रुचि कैसे उत्पन्न की जा सकती है ? विचारणीय है यह।

सबसे पहली आवश्यकता पठन-पाठन की परंपरा को एक आंदोलन के रूप में पुनर्जिवित करने की है। बालकों में पुस्तकों के प्रति रुचि नहीं है तो उनके प्रति वितृष्णा भी नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि बच्चों के आस-पास इस तरह का वातावरण निर्मित किया जाए कि वे स्वतः पुस्तकों की और आकृष्ट हों, उन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित हों। इसके लिए अभिभावकों, शिक्षकों, लेखकों, सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक एवम स्वयमसेवी संस्थाओं द्वारा गांवों, शहरों में बालसाहित्य की गोष्ठियाँ आयोजित की जाएं। बच्चों की कार्यशालाएं आयोजित की जाएं। नई पुस्तकें पढ़ने के लिए बच्चों को प्रेरित व पुरस्कृत किया जाए। वहीं अच्छे लेखकों, इस क्षेत्र में निःस्वार्थ भाव से कार्य करने वाले व्यक्तियों, संस्थाओं को सम्मानित किया जाए। इस तरह के प्रयास कही जगह हो भी रहे हैं, जो स्तुत्य हैं। यदि बालकों के हाथों में अच्छे बालसाहित्य की पुस्तकें होंगी तो एक पुस्तक-संस्कृति का विकास तो होगा ही, बच्चे भी पुस्तकों से दूर नहीं रह सकेंगे। हमें यह बात ध्यान में रखनी होगी कि बालसाहित्य नहीं रहा तो उसके रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी आज तक हस्तांतरित हो रही संस्कृति भी नहीं रहेगी और तब मानवता, समाज, राष्ट्र और हम .... ?? बालसाहित्य के रूप में संजोए गए शिशु गीत, लोरियों, बालगीत, कविता, कहानियां, नाटक, संस्मरण, यात्रा वृतांत, लोक कथाएं रूपी अमूल्य धरोहर काल कवलित न हो जाए। आने वाली पीढ़ी के हाथों यह संपदा हमें सुरक्षित सौंपनी है